E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi, Assistant Professor, Department of Sanskrit, Dr. Shyama Prasad Mukherjee University, Ranchi

भारवेरर्थगौरवम्

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

काव्यजगत् का स्रष्टा कवि अपनी विशेष प्रतिभा द्वारा साहित्य जगत् को नवीन दिशाप्रदान करता है। संस्कृत साहित्य के महाकवियों ने भी अपने में काव्यों में नूतन शैली एवं विशेषता प्रदान कर साहित्य जगत् में अपना स्थान सुरक्षित कर लिया है। महाकवि कालिदास उपमा अलंकार के लिए सिद्धहस्त को हैं तथा महाकवि भारवि अर्थगौरव के लिए। अल्प-शब्दावली द्वारा विस्तृत भावों को व्यक्त करने की क्षमता भारवि के काव्य में सहज ही प्राप्त होती है। किसी महाकवि द्वारा प्रस्तुत 'भारवेरर्थगौरवम्' उक्ति महाकवि भारवि के काव्य में पूर्णरूपेण चरितार्थ होती है।

भारवि के महाकाव्य का सर्वश्रेष्ठ वैशिष्ट्य उनका अर्थगाम्भीर्य है, जिसका कि तात्पर्य है-'अल्प शब्दों में प्रभूत अर्थ-सन्निवेश'। भारवि की कविता का आदर्श ही अप्रतिम है। उनका व्यक्तिगत अभिमत यह है कि 'सुस्पष्ट वर्णालङ्कारों से विभूषित, शत्रुओं को भी वशीभूत कर लेने वाली, प्रसादगुणोपेत, गम्भीर पदों वाली सरस्वती पुण्यहीनों के मुख से कभी प्रकट ही नहीं होती'-

विवित्तवर्णाभरणा सुखश्रुतिः प्रसादयन्ती हृदयान्यपि द्विषाम्।

प्रवर्तते नाकृतपुण्यकर्मणां प्रसन्नगम्भीरपदा सरस्वती।।

भारवि की पदावली परिस्फुट है, अस्पष्ट नहीं। अर्थगाम्भीर्य से संवलित है, अर्थों की पुनरुक्ति से परे है और आकांक्षित भाव को प्रकट करने में सर्वसमर्थ है।

भारवि की वाणी का अर्थगौरव प्रथम सर्ग से ही प्राप्त होने लगता है। सुयोधन की राज्यव्यवस्था का सम्यगाकलन करके जब वनेचर द्वैतवन महाराज युधिष्ठिर के पास आता है तभी उसके 'सन्देशज्ञापन' में हम अर्थगौरव का प्रथम दर्शन करते हैं। कवि कहता है-'स सौष्ठवौदार्यविशेषशालिविनिश्चितार्थामिति वाचमाददे'। वस्तुतः यही एक वाक्य अर्थगौरव का लगता भी

है। कवि ने प्रथमसर्ग के अनेक पद्यों के अन्तिम चरण में सदुक्तियों का प्रयोग किया है। ये सदुक्तियाँ अल्पशब्दा होकर भी विपुल अर्थ का प्रकाश करती हैं- **'न हि प्रियं प्रवक्तुमिच्छन्ति मृषा हितैषिणः'**, **'गुणानुरोधेन विना न सत्क्रिया'**, **'विचित्ररूपाः खलुचित्रवृत्तयः'**, **'हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः'**, **'विचित्ररूपाः खलु चित्तवृत्तयः'**, **'वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः'**, **'निराश्रया हन्त हता मनस्विता'**, **'न्यायाधारा हि साधवः'**, **'सतां हि वाणी गुणमेव भाषते'** आदि इसी प्रकार की उक्तियाँ हैं। अर्थगाम्भीर्य किरात के प्रत्येक पात्र के वचनोपन्यास में प्राप्त होता है। दूसरे सर्ग में यदि भीम 'उपपत्तिमद्' एवं 'ऊर्जिताश्रय' वचन प्रस्तुत करते हैं तो द्रौपदी भी अर्थगौरव में वागीश बृहस्पति तक को विस्मित कर देती है-**'अपि वागधिपस्य दुर्लभं वचनं तद्विदधीत विस्मयम्'**।

महाकवि भारवि स्वतः अपनी कविता की विशेषता को व्यक्त करते हुए कहते हैं-

परिणामसुखे गरीयसि व्यथकेऽस्मिन् वचसि क्षतौजसाम्।
अतिवीर्यवतीव भेषजे बहुरल्पीयसि दृश्यते गुणः।।

अर्थात् अल्प शब्दों में अर्थ बाहुल्य को ही अर्थगौरव कहते हैं। कवि की कविता परिणाम में सुखप्रद होती है। अल्प औषध भयंकर रोगों के विनाश की क्षमता रखकर अपने गुणों को प्रदर्शित करती है। उसी प्रकार भारवि की कविता क्षतौज बाणों के लिए परिणाम में सुखद है। किरातार्जुनीय महाकाव्य राजनीति के गूढ़ तत्त्वों का विश्लेषण करने की विशेष क्षमता रखता है। द्वितीय सर्ग के अन्तर्गत युधिष्ठिर भीम संवाद में युधिष्ठिर भीम की उक्तियों की प्रशंसा करते हुए कहते हैं-

स्फुटता न पदैरपाकृता न च न स्वीकृतमर्थगौरवम्।
रचिता पृथगर्थता गिरां न च सामर्थ्यमपोहितं क्वचित्।।

अर्थात् पदों के द्वारा स्पष्टता को आवृत्त नहीं रखा गया है, काव्य सभी स्थानों पर अर्थगौरव युक्त है। अर्थ पुनरुक्ति तथा अर्थ सामर्थ्य को भी सुरक्षित रखा गया है। उपर्युक्त उदाहरण द्वारा कवि अपनी अर्थगौरव सम्बन्धी काव्य विषयक विशेषता को स्पष्ट करता है कि उसके काव्य में अल्प पदों द्वारा ही अत्यधिक भावों की अभिव्यक्ति होती है। उनके काव्य में कठिन तथा सरल सभी प्रकार के शब्दों का प्रयोग है। निम्नांकित श्लोक द्वारा कठिन पदों में मधुर एवं गम्भीर अर्थ व्यक्त किया गया है-

सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम्।

वृणते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धा स्वयमेव सम्पदः।।

अर्थात् अकस्मात् अविवेकवश कोई भी कार्य नहीं करना चाहिए क्योंकि अविवेक ही आपत्तियों का कारण है। सम्पत्तियाँ एवं वैभव विवेकशील मानव को स्वतः प्राप्त हो जाते हैं। इस उक्ति की सार्थकता को कोई अस्वीकार नहीं कर सकता।

इस प्रकार कवि के काव्य में अनेक स्थलों पर प्रायः सार्वभौमिक सत्यों से ओत-प्रोत सूक्तियाँ प्राप्त होती हैं; जैसे-

'वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः'।

अर्थात् महान् व्यक्तियों के साथ विरोध भी श्रेयस्कर है क्योंकि वह भी वरदान सिद्ध होता है।

जगत् में प्रिय एवं हितकर वाक्यों में प्रायः विरोध प्राप्त होता है। क्योंकि हितकर एवं सत्यवचनों में कटुता होना स्वाभाविक है-

'सुदुर्लभाः सर्वमनोरमा गिरः'।

'हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः'।

गुण सर्वत्र पूज्य होना चाहिए। परिचय की अपेक्षा गुण मनुष्य को अधिक प्रिय होते हैं। कवि ने ठीक ही कहा है-'गुणाः प्रियत्वेऽधिकृताः न संस्तवः'।

राजनैतिक सत्य का कवि ने कितना सुन्दर विश्लेषण प्रस्तुत किया है-

व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः।

प्रविश्य हि घ्नन्ति शठास्तथाविधानसंवृताङ्गान्निशिता इवेषवः।।

अर्थात् 'शठे शाठ्यं समाचरेत्' की नीति कवि को अभीष्ट है। जो व्यक्ति दुष्ट के साथ दुष्टता का व्यवहार नहीं करते हैं, वे पराभव को प्राप्त होते हैं। जैसे – कवचरहित शरीर में बाण सहज ही प्रविष्ट होकर विनाश का कारण बन जाता है।

कवि का विचार है कि शत्रुओं पर विजयप्राप्ति का सर्वसुलभ उपाय उन्हें कामवासनाओं की ओर प्रेरित कर देता है। क्योंकि वासना का परिणाम दुःखप्रद होता है-

'कामाकृष्टा हि साध्या शत्रवः'

'आपातरम्या विषयाः पर्यन्तपरितापिनः'

'नातितिक्षा सममरति साधनम्'

भारवि अलंकृत काव्यशैली के कवि हैं। काव्य में अलंकारों का प्रयोग होते भी अर्थगौरव क्षीण नहीं हुआ है। कालिदास, माघ आदि कवियों में भी अर्थगाम्भीर्य प्राप्त होता है, किन्तु भारवि के अर्थगौरव के समक्ष न्यून हैं। राजनैतिक नीतियों का विश्लेषण करते हुए अर्थगौरव को सुरक्षित रख कर परिष्कृत तथा अलंकृत पदावली प्रस्तुत करके कवि ने अपने काव्य को उत्कृष्ट बनाया है।

भारवि के काव्य में सर्वत्र अर्थ-व्यंजकता अभिव्यञ्जित हो रही है। राजनीति के गूढतत्त्वों का चारुचमत्कृत वैचित्र्य भी कितने चातुर्य के साथ उन्होंने चित्रित किया है-

प्रभवः खलु कोशदण्डयोः कृतपञ्चाङ्गविनिर्णयो नय।

स विधेयपदेषु दक्षतां नियतिं लोक इवानुरुध्यते।।

उन्होंने यह स्पष्ट कह दिया है कि सर्वदा अपकार में ही आसक्त रहने वाले राजा के साथ की गई सन्धि को येन-केन प्रकारेण भङ्ग कर देना चाहिये-

न समयपरिरक्षणं क्षमं ते निकृतिरेषु परेषु भूरिधाम्नः।

अरिषु हि विजयार्थिनः क्षितीशा विदधति सोपधि सन्धिदूषणानि।।

उन्होंने स्पष्ट कर दिया है कि गरजते मेघ को देखकर जो सिंह ऊपर को उछलता है, वहाँ किसी भी फल की आशा नहीं है, परन्तु बड़े लोगों का यह स्वभाव है कि वे किसी के अभ्युदय को सहन नहीं कर सकते-

किमपेक्ष्य फलं पयोधरान् ध्वनतः प्रार्थयते मृगाधिपः।

प्रकृतिः खलु सा महीयसः सहते नान्यसमुन्नति यया।।

जो नृपति समय के अनुकूल ही चलकर मृदुता और तिग्मता का आश्रय लेता है वह व्यक्ति सूर्य के प्रकाश के सदृश ही समस्त लोक पर अपने तेज से प्रभुत्व को स्थापित कर लेता है-

समवृत्तिरुपैति मार्दवं समये यश्च तनोति तिग्मताम्।

अधितिष्ठति लोकमोजसा स विवस्वानिव मेदिनीपतिः।।

राजनैतिक विषयों के अतिरिक्त महाकवि भारवि ने अपने प्रकृति-चित्रण और चरित्र चित्रण में भी अर्थगौरव की स्थापना की है। सन्ध्या के समय घर की ओर लौटती हुई वेगपूर्वक दौड़कर अपने बछड़े के पास पहुँचने में असमर्थ, अतः उत्सुकता के कारण मोहवश अपने स्तनों से दूध को बहाती हुई गायों का कितना सुन्दर, सरस एवं स्वाभाविक वर्णन किया है-

उपारताः पश्चिमरात्रगोचरादपारयन्तः पतितुं जवेन गाम्।

तमुत्सुकाश्चक्रुरवेक्षणोत्सुकं गवां गणाः प्रस्तुतपीवरोधसः।।

भारवि के पात्रों में भी अत्यधिक सजीवता है। सर्वदा वन में रहने वाला वनेचर युधिष्ठिर को वृत्तान्त कहने के पूर्व प्रणाम कर लेता है। यद्यपि द्रौपदी का हृदय अपमान की ज्वाला से जल रहा है, फिर भी वह युधिष्ठिर से अपनी भावना को अभिव्यक्त करने पर शिष्टता का परित्याग नहीं करती है-

भवादृशेषु प्रमदाजनोचितं भवत्यधिक्षेप इवानुशासनम्।

तथापि वक्तुं व्यवसाययन्ति मां निरस्तनारीसमया दुराधयः।।

भारवि का यही अर्थगाम्भीर्य उनके प्रकृति-वर्णनों में भी प्राप्त होता है। कवि ने साधारण संवादों में भूपतियों का 'निसर्गदुर्बोधचरित' एवं उनका 'निगूढ़तत्त्व नयवर्त्म' समाहित कर दिया है। सुयोधन यथोचित रूप से समय का विभाजन करके, समान आदर के साथ अर्थ, धर्म एवं काम का सेवन करता है, फलतः कभी भी उसके इस पुरुषार्थत्रय में कोई विरोध नहीं पैदा होता। दुर्योधन के इस वैशिष्ट्य-ख्यापन में कवि नीतिशास्त्र का एक अध्याय ही उड़ेल देता है-

असक्तमाराधयतो यथायथं विभज्य भक्त्या समपक्षपातया।

गुणानुरागादिव सख्यमीयिवान् न बाधतेऽस्य त्रिगणः परस्परम्।।

भले ही भारवि कालिदास की भाँति प्रकृति को मानवीय भावों की सन्देशवाहिनी न बना सके हों, इतना तो स्पष्ट है कि किरात में वर्णित प्रकृति कल्पनाचारुत्व में, रसचर्वणा में और सर्वाधिक अर्थगौरव द्योतित करने में, अत्यन्त उदग्र है। कहीं-कहीं तो कवि कालिदास की ही भाँति जड़-चेतन

को एकीभूत कर देता है। प्रकृति एवं नवयुवती के अनुपम सौन्दर्य को एक ही तुला पर तौलते हुये कवि शिशिरोपगम प्रस्तुत करता है-

कतिपयसहकारपुष्परम्यस्तनुतुहिनोऽल्पविनिद्रसिन्दुवारः।

सुरभिमुखहिमागमान्तशंसी समुपययौ शिशिरः स्मरैकबन्धुः।।

शरद् ऋतु में शिरीषपुष्प के समान हरितवर्ण शुकसमूह मूँगे के समान लाल चञ्चुपुट में धान की पीली बालियाँ लिए आकाश उड़ा जा रहा है। इस प्रकार क्रमशः हरित, रक्त, पीत एवं नील वर्णों के परस्पर मिश्रण से आकाश में एक मनोहर इन्द्रधनुषी शोभा की सृष्टि हो रही है-

मुखैरसौ विद्रुमभङ्गलोहितैः शिखाः पिशङ्गीः कलभस्य विभ्रती।

शुकावलिर्व्यक्तशिरीषकोमला धनुः श्रियं गोत्रभिदोऽनुगच्छति।।

ये हैं भारवि की कविता के कुछ प्राञ्जल उद्धरण, जिनमें उनका काव्यात्मक, वैशिष्ट्य (अर्थगौरव) साकार हुआ है। कवि दीर्घकाय समासों का प्रयोग नहीं करता अतएव उसकी कविता में क्लष्टत्वदोष नहीं है। चित्रकाव्यों में अवश्य ही कुछ अर्थावगति में बाधा होती है, परन्तु उसका कारण कवि का अपना स्वारस्य नहीं प्रत्युत 'चित्रकाव्यता' मात्र है। उदाहरण के लिए पन्द्रहवें सर्ग का यह एकाक्षर श्लोक द्रष्टव्य है-

न नोननुन्नो नुन्नोनो नाना नानानना ननु।

नुन्नोऽनुन्नो ननुन्नेनो नानेना नुन्ननुन्ननुत्।।

छन्द और व्याकरण के विचित्र प्रयोगों से शैली में भी कवि ने अर्थगौरव को समाविष्ट कर दिया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि महाकवि भारवि की कृति महान् अर्थ से संवलित और रस से ओत-प्रोत है। सदुक्तिकर्णामृत में भारवि के विषय में कहा गया है- 'प्रकृतिमधुरा भारविगिरः'। अर्थात् भारवि के वचनों में अन्तस्तत्त्व बड़ा ही मधुर है। शारदातनय ने भारवि की वाणी में भाव और रस का तादात्म्य बतलाया है- 'तादात्म्यं भावरसयोः भारविः स्पष्टमूचिवान्'। भारवि के काव्य के प्रत्येक पहलू में अर्थगौरव भरने के स्तुत्य प्रयास को देखकर कीथ महाशय ने कहा है कि इसमें सन्देह नहीं है कि भारवि की वर्णनाशक्ति और अपने सर्वोत्कृष्ट रूप में उनकी शैली में एक शान्तिपूर्ण गौरव है, जो

सचमुच आकर्षक है'। आर० सी० दत्त ने भाषा, भाव और उनकी उत्कृष्ट अभिव्यक्ति के गौरव में भारवि को श्रेष्ठ बतलाया है। कालिदास इस दृष्टि से कभी-कभी ही उनकी समकोटि में आते हैं। अन्ततोगत्वा निष्कर्ष यही निकलता है कि भारवि का अर्थगाम्भीर्य पाठकों को सहसा ही अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है और उनको इतने गहरे में ले जाता है कि उनका मन उस गम्भीर मानस से निकलने के लिए चेष्टा ही नहीं करता है और उस अर्थ की गम्भीरता से गम्भीर हुए मानस में मनन ही करता रह जाता है।

वस्तुतः भारवि का काव्य, नारियल के समान कठोर भाषा की कञ्चुलिका में तिरोहित है, परन्तु यह बहिरंग कठोरता ही उसकी इयत्ता नहीं। नारियल के अन्तराल की ही भाँति भारवि के काव्य का अन्तराल भी, रसगर्भनिर्भर, सरल एवं सुमधुर है। आचार्य मल्लिनाथ ने ठीक ही कहा है-

नारिकेलफलसम्मितं वचो भारवेः सपदि तद् विभज्यते।
स्वादयन्तु रसगर्भनिर्भरं सारमस्य रसिका यथेप्सितम्।।

इसी प्रकार की प्रशंसा भारतचरित के प्रणेता कृष्णकवि ने भी की है जिसके अनुसार भारवि की कविता 'सत्पथदीपिका' सिद्ध होती है-

प्रदेशवृत्त्यापि महान्तमर्थं प्रदशर्यन्ती रसमादधाना।
सा भारवेः सत्पथदीपिकेव रम्या कृतिः कैरिव नोपजीव्या।।